'ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः, जीवनं सत्यशोधनम्'

विनोबा-प्रवचन

(सप्ताह में तीन बार—मंगल, गुरु और शनि को प्रकाशित)

वर्ष ३, अंक १४३ | वाराणसी, शनिवार, १२ दिसम्बर, १९५९ | पच्चीस रुपया वार्षिक

प्रार्थना-प्रवचन

थेन (जम्मू-कश्मीर) २४-५-'५९

हम गाँव-गाँव और घर-घर में भक्तों की तलाश करते हुए घूम रहे हैं

जम्मू-कश्मीर की यात्रा का आज यह हमारा तीसरा दिन है। यह एक छोटा-सा गाँव है। हम अभी देखकर आये हैं। घर-घर घूम लिया। स्कूल, स्कूल मास्टर का घर, दूकानें, पंचायतघर, गाँव के मुखिया, नम्बरदार का घर और भी बहुत लोगों के घर देखे। एक बरामदे में एक "बाबा" को भी देखा। आज वे हमारी इस सभा में बोलनेवाले थे। लेकिन वे अभी नहीं आये दीखते हैं। उनके सामने सिगरेट पड़ी थी। हमने उनसे पूछा कि क्या आप हमारी सभा में बीड़ी पीने की बात बोलेंगे? वे कहने लगे कि "ना, बीड़ी मत पियो, ऐसी बात हम करेंगे" इस प्रकार के कई बाबा गाँव-गाँव में घूमते हैं। न मालूम लोग उनपर कैसे श्रद्धा रखते हैं?

सच्चे भक्त की पहचान

हमारी श्रद्धा भगवान पर, उनके भक्तों पर और सज्जनों पर होनी चाहिए। सज्जन कौन हैं, यह समझना चाहिए। सच्चे सज्जन गाँव-गाँव में और घर-घर में हैं। वे न भेष बदलते हैं, न भस्म लगाते हैं और न लंगोटी पहनते हैं। साधारण लोगों जैसे रहते हैं, वे भगवान के भक्त होते हैं। नामदेव भगवान के बहुत बड़े भक्त थे। मन्दिर में रोज जाते थे। उनको अभिमान हो गया कि मैं भगवान का बहुत बड़ा भक्त हूँ। भगवान ने उनसे कहा, "तुम तो बड़े भक्त हो, लेकिन दूसरे लोग तुमसे भी ज्यादा भक्त हैं।" नामदेव ने कहा, "अच्छा जी, हमसे भी बढ़कर भक्त हैं? तो बताइये, वे कौन हैं?" भगवान ने नाम बताया। नामदेव उसे देखने उसके घर गये। क्या देखा? वह भक्त खेत पर काम करने गया था। दिनभर काम करता था। नामदेव ने उसके साथ काम किया। देखा, उसने भगवान का नाम भी नहीं लिया। दिनभर खेत में काम करने के बाद शाम को वह किसान घर जाने के लिए निकला। पत्नी भी साथ थी। वे दोनों जा रहे थे। पत्नी पीछे-पीछे चलती थी। वह भक्त थोड़ा आगे चला और फिर नीचे झुककर आगे बढ़ा। पत्नी ने देखा और आगे बढ़कर उससे पूछा "आपने क्या किया? आप नीचे क्यों झुके थे? बीचमें आपको क्या हो गया?" उन्होंने जवाब दिया:-'बीच रास्तेमें सोने का गहना पड़ा था। इसलिए मुझे लगा तुम पीछेसे आरही थी। तुम्हारी नजर उसपर जायगी तो लालच में पड़ जाओगी। इसलिए उसपर मैंने धूल डाल दी। उसे ढाँक दिया।' यह सुनकर पत्नी ने कहा "आपने क्या किया? धूल पर धूल डाल दी।" यह सारा नामदेवने देखा और सुना। सोने का उसने स्पर्श भी नहीं किया और पत्नी थी ऐसी कि उसे धूल के जैसी मानती है। तो नामदेव को यकीन हो गया। सिर्फ मंदिर में जाने से भक्ति नहीं होती है। सच्चे भक्त मंदिर में जाकर भजन गाने में वक्त नहीं गुजारते हैं। वे दिनभर मेहनत-मशक्कत करके अपने पसीने की कमाई की रोटी खाते हैं। भगवान के भक्त हराम का खाना नहीं खाते हैं। किसी चीज का लोभ, लालच नहीं रखते हैं। मोह से दूर रहते हैं। भक्त की पहचान यह नहीं है कि वह मंदिर में जाता है, जिस्मको भस्म लगाता है या रुद्राक्ष की माला पहनता है। भक्त का लक्षण है कि वह सबपर प्यार करता है, हराम का नहीं खाता, मेहनत-मशक्कत करता है। इस प्रकार का भक्त रहता है। सबपर प्यार करनेवाला, झूठ न बोलनेवाला और अपने से जितनी हो सकती है, उतनी मदद करनेवाला ही सच्चा भक्त है। फिर वह जिस्म को बाहरी भस्म न लगाये तो भी हर्ज नहीं।

भक्त बनाम शान्तिसैनिक

हम ऐसे ही भक्त की तलाश में घूम रहे हैं। यह हमारी रोज यात्रा चल रही है। अब जम्मू में भी हो रही है। शुरू में हम लोगों के पास जाते हैं, जमीन माँगते हैं और बेजमीनों को, गरीबों को जमीन देते हैं। यह छोटा काम है। हमारा बड़ा काम तो यह है कि हम भक्त की तलाश में घूम रहे हैं। गाँव में जो भक्त हैं, उनसे मिलना चाहते हैं। घंटा, डेढ घंटा गाँव में घूम लिया तो हमने देखा, एक घर में भगवान की मूर्ति नहीं थी। लेकिन उस घरवाले भाईने कहा, "भगवान की मूर्ति नहीं है, फिर भी हम भगवान को याद करते हैं।" दूसरे घर में कृष्ण भगवान की मूर्ति थी। लेकिन घर में मूर्ति है, इसपर से कोई भक्त नहीं बनता है। भक्त तो सबपर प्यार करनेवाला सबको मदद करनेवाला होता है। सबकी सेवा करता है। मेहनत करता है। इसे हमने शांतिसैनिक नाम दिया है। हम चाहते हैं, गाँव-गाँव में ऐसे शांतिसैनिक हों। कश्मीर में भी हमें एक शांतिसैनिक का नाम मिला है। वह है यदुनाथसिंहजी, जो आजकल हमारी यात्रा की व्यवस्था में हमारे साथ हैं। वे पहले सेना में काम कर चुके हैं।

हमने कहा है कि मौके पर शांतिसैनिक को मर-मिटने के लिये तैयारी रखनी होगी। कहीं दंगा फसाद हुआ तो शांतिसैनिक वहाँ शांति करने के काम में अपनी जान जोखम में डाल देगा। वह मौके पर अपनी जान भी देगा, कभी गुस्सा नहीं करेगा। हमें इस प्रकार के शांतिसैनिक चाहिये। हम ऐसे भक्त की खोज में घूम रहे हैं। गाँव की सेवा करनेवाले ऐसे भक्त यहाँ भी मिलेंगे, ऐसी उम्मीद है।

• • •

प्रार्थना-प्रवचन

नारधा (बड़ोदा) १२-१०-'५८

वनवासी क्षेत्रों में ग्रामदान अत्यावश्यक

अभी कहा गया है कि मैं बहुत लंबी सफर कर यहाँ आया हूँ। अब यहाँ गुजरात में मेरी यात्रा चलती है। अबतक बीस हजार मील तो हो गये होंगे। याने पैदल यात्रा करके ही मैं हरएक गाँव में पहुँचता और सर्वोदय-विचार का संदेश सुनाता हूँ। किन्तु इस तरह मैं हर गाँव में संदेश पहुँचाऊँगा, ऐसी आशा नहीं रख सकते। वह संदेश तो कौवे, कोयल और मोर पहुँचायेंगे और पहुँचा भी रहे हैं। इसीलिए यहाँ आते ही मुझे एक गाँव ग्रामदान में मिला। यह सारा काम यहींके लोगों ने किया है। अब तो मैं ऐसा ही करता हूँ। आप सब गाँववालों के दर्शन से मुझे बहुत खुशी होती है। दर्शन के आनन्द के लिए ही मेरी यात्रा चलती है। वैसे तो वह कुछ काम के लिए चल रही है, पर दूसरा कोई काम न हो तो भी मैं इस आनन्द के लिए यात्रा करता रहूँगा।

पहले ग्रामसन्देश, फिर विश्वसन्देश

अभी स्वराज्य आया है और मैं जो संदेश ले आया हूँ, वह "विश्व-सन्देश" है। बात बिलकुल सरल है, पर है यह विश्व-सन्देश। धीरे-धीरे जनता इसे उठायेगी और यह समझ लेगी कि यह विश्व-सन्देश है। उससे पहले यह "ग्राम-सन्देश" है। गाँव के लिए इसकी अत्यन्त आवश्यकता है। पहले इसकी जरूरत गाँव को है और फिर सारी दुनिया को है, इसलिए पहले "जय ग्रामदान" और फिर "जय जगत" ऐसा कार्यक्रम है। मुझे बहुत आनन्द होता है कि बारिश का डर होते हुए भी दूर-दूर के गाँवों से इतनी बड़ी संख्या में इतने भाई, बहनें और लड़के आये हैं और मेरा भाषण सुनते हैं। मेरे शब्दों में तो जादू नहीं है। जादू तो मेरे हृदय की प्रार्थना में है, जो हम सभा-समाप्ति के पहले करते हैं। यह प्रार्थना ही मेरी मुख्य शक्ति है और इसके साथ सदा मैं कुछ कह देता हूँ।

वनवासियों को नेक सलाह

वनवासी क्षेत्र में ग्रामदान तो होना ही चाहिए। इसके सिवा जनवासी क्षेत्र खड़ा नहीं हो सकता। उसका रक्षण करने के लिए बाहर से दूसरी कोई शक्ति समर्थ नहीं होगी। जबतक अपने गाँव की ही शक्ति पैदा नहीं करेंगे, तबतक बाहर से कोई मदद नहीं मिलेगी। बारिश के दिनों में परमेश्वर वर्षा करता है, पर खेत में जो कुछ बोया होगा, उसीकी फसल होगी। यदि कुछ बोया ही न होगा तो फसल न होगी, घास ही उगेगी। इसलिए अगर आप फसल लाना चाहते हैं तो आपको मेहनत करनी चाहिए और उसके लिए ईश्वर की कृपा भी चाहिए। अगर हम स्वयं काम नहीं करेंगे तो परमेश्वर की मदद भी नहीं मिलेगी। फिर सरकारी मदद या बाहरी मदद इसकी बात ही क्या? वनवासी गाँव शहर से बहुत दूर होते हैं। शहर पर उनकी नजर रहती है। उनका चित्त शहर की ओर आकर्षित रहता है। जंगल में मंगल वे नहीं मना सकते। केवल लाचारी से वहाँ रहते हैं, पर मन में इच्छा तो यही रहती है कि शहर में रहते तो कितना अच्छा होता? अगर वे जंगल में मंगल कर सकें तो उनके जीवन में बहुत रस आयेगा। वहाँ सुन्दर दृश्य, स्वच्छ हवा, पानी और आकाश मिलता है। शहरवालों को वह संभव नहीं। अभी तो आप जंगल के जीवन का आनन्द ले रहे हैं, पर अगर कोशिश करें तो यहाँके जीवन में भी आपको जीवन की आवश्यक चीजें मिल सकती हैं।

शहरवाले गाँव की सेवा करें

भूमाता ही हमारा मुख्य आधार है। हवा, चन्द्र, सूर्य जैसे सबके लिए हैं, वैसे ही जमीन भी परमेश्वर ने सबके लिए पैदा की है। इसलिए "यह आपकी जमीन, यह मेरी जमीन" ऐसा भेद नहीं करना चाहिए। सारे गाँव में जितनी जमीन है, वह सारे गाँव की है। जमीन का वास्तविक मालिक तो भगवान है। जमीन के मालिक के तौर पर सरकार में ग्राम-सभा का नाम रहे। सारा गाँव एक परिवार बन जाय। आदिवासी, वनवासी क्षेत्र में बड़े-बड़े गाँव तो होते नहीं हैं, पचास या सौ घरों के गाँव होते हैं और वे सारे एक परिवार जैसे अच्छी तरह रह सकते हैं। किसी-के घर में कोई बीमार हो, किसीके घर बच्चे पैदा हों तो सारे गाँव को खबर मिल जाती है। यह तो बड़ी खबरें हैं, पर किसी-के घर में आज क्या रसोई बनी है, यह भी गाँव को मालूम हो जाता है। इस तरह जहाँ आसपास एक-दूसरे में स्नेह-संबंध, परिचय, ज्ञान होता है, वहाँ ग्रामदान सहज ही हो सकता है और होना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि मैं सुझाना चाहता हूँ कि ग्रामदान वनवासी क्षेत्र में ही हो सकते हैं। ग्रामदान ही क्या, शहरदान भी हो सकते हैं। इस विचार के अंदर जो अक्ल है, वह किसी शहरवाले के पास पहुँचे तो हाईस्कूल, कालेज, वकील, व्यापारी सर्वत्र यह बात हो सकती है। किन्तु यह करने से क्या लाभ और क्या हानि होती है, यह समझना चाहिए। सारे गुजरात में, जो गांधीजी का प्रदेश कहलाया जाता है, एक जमाने में सैकड़ों कार्यकर्ता थे। किन्तु अभी तो ज्यादा से ज्यादा साठ-सत्तर कार्यकर्ता होंगे। इतने से कैसे काम चलेगा? अतः कार्यकर्ताओं की संख्या बढ़नी चाहिए। शहरवालों को गाँव की सेवा करनी चाहिए, तभी वे टिकेंगे। नहीं तो गाँव के साथ वे भी गिरेंगे, क्योंकि शहरों का आधार गाँवों पर ही है।

नौकरों की जगह सेवक चाहिए

महाराज कहते थे कि पढ़े-लिखे लड़के गाँव में आते हैं तो अच्छा ही है। किन्तु उनमें व्यावहारिक दृष्टि कम होती है। जिस स्कूल में वे सीखते हैं, उस स्कूल के शिक्षकों का ही ज्ञान कम रहता है तो विद्यार्थियों को वे ज्ञान कहाँसे देंगे? वे भी किताबें पढ़-पढ़कर पास होते हैं और नौकरी ढूँढ़ते हैं। आज हमारी सरकार ने देश में पचपन लाख नौकर नियुक्त किये हैं। मैं इसे बिलकुल निरर्थक मानता हूँ। इतना बड़ा शूद्रवर्ग पैदा होना ठीक नहीं। आज के समाज में सेवक अपनी ही सेवा करते हैं, इसलिए मुझे यह सारा भयंकर लगता है। इनके बदले गाँव-गाँव में अगर पाँच हजार मनुष्यों के लिए एक सेवक आगे आये और वह लोगों की सेवा करे तो वह बहुत अच्छी व्यवस्था होगी। इसके लिए शहर के कतिपय त्यागी शिक्षित लड़के-लड़कियों को हम छोड़ देना नहीं चाहते, फिर भी ऐसे सेवक गाँव से ही मिलने चाहिए। आपको जिसपर श्रद्धा है, ऐसे मनुष्य को अपने सेवक की तौर पर ढूँढ़ लें। गाँव ही तय करे कि हमारा सेवक कौन हो। अभी तो सरकार की तरफ से पढ़े-लिखे पचपन लाख नौकर नियोजित किये गये हैं। वे सब शहर-वाले हैं, इसलिए हम उनसे द्वेष नहीं करते। ये लोग भी अपने ही हैं, परन्तु उनमें मुख्यतः सारे व्यवहारशून्य होते हैं। इसलिए उनका व्यवहार चलाने के लिए उन्हें मुकर्रर करने पर सेवा करना

www.vinoba.in

चाहते हुए भी उनसे सेवा नहीं होती है। हमारे सन्त लोग पढ़े-लिखे नहीं थे, पर मान्यवर अवश्य थे। इसलिए लोगों की सेवा के योग्य बने। वे लोगों में मिल जाते और उनकी बातें समझ लेते—लोगों में ओतप्रोत होकर सेवा करते थे। गाँव में स्वराज्य किस तरह लाया जाय, यह सेवक गाँववालों को बतलायें और उसके लिए लोग सम्मति दें कि इस मनुष्य की सेवा लेने के लिए और हम सब अहिंसा में मानते हैं इसके प्रतीक के रूप में हम यह सम्मति दे रहे हैं।

अहिंसा और समत्व दोनों का अविनाभाव

अगर सभी लोग अहिंसा का नाम लें तो धीरे-धीरे समाजवाद और साम्यवाद का भेद मिटता जायगा। फिर सभी काम ही करेंगे। दो साल पहले अणुबम शक्ति कुछ नहीं थी। इसलिए जितनी तड़पन, जितनी तमन्ना दूसरे किसीमें शान्ति के लिए है, उतनी ही आज दुनिया भर के कम्युनिस्टों को है। उनकी सह-जीवन की बात अच्छी है। हिंसा की शक्ति राष्ट्र की शक्ति नहीं। हिंसा देवी ने ऐसा व्रत नहीं लिया है कि मुझे सयाने मनुष्य के ही हाथ में रहना है। वह राक्षसों के हाथ में रह सकती है और देवों के हाथ में भी। इसलिए अगर साम्यवाद हिंसा और राक्षस के हाथ में जाय तो वह सारा-का-सारा टूट जायगा। इसलिए जब साम्यवादी लोग समत्व के साथ-साथ शान्ति की भी बात करते हैं तो वह समत्व और शान्ति सर्वोदय ही है। याने वे "सर्वोदय" का नाम देना चाहें तो मैं कोई शिकायत नहीं करना चाहता। यदि शान्ति और समत्व दोनों मिलकर साम्यवाद होता है तो "वाद" किसलिए? 'साम्ययोग' कहिये। थोड़े-बहुत भेद रहते हों तो कोई हर्ज नहीं, स्वभाव-भेद तो कुछ-न-कुछ रहता ही है। इस तरह सारी दुनिया और सारा भारत आगे धीरे-धीरे सर्वोदयी बनेगा, क्योंकि वे अक्लवाले हैं, ऐसा मैं मानता हूँ। अहिंसा और समत्व इनमें से एक का भी नाम बाद करें तो काम न होगा। समत्व के बिना अहिंसा निकम्मी होगी और अहिंसा के बिना समत्व भी काम न करेगा। गांधीजी भी इन दोनों को साथ रखकर ही बातें करते थे। आज के जमाने का समत्व यह सत्य ही है। सत्य याने समता। सब एक-दूसरे के सुख-दुःखों को अपना मानें और समरस होकर काम करें तो सबका जीवन चलेगा। इसलिए सत्य सबको कबूल करना पड़ेगा और वह सबके लिए जरूरी है।

समत्व, प्रेम और करुणा अपेक्षित

साढ़े सात साल से सर्वत्र मैं यही कहा करता हूँ। इतना ही नहीं, जबसे मेरा सार्वजनिक जीवन शुरू हुआ, तबसे आज तक इसे मैं निरन्तर लोगों के सामने रख रहा हूँ। अगर सारे हिन्दुस्तान के सामने समत्व, प्रेम और करुणा आ जाय तो इतने सारे सेवकों की जरूरत भी नहीं पड़ेगी। फिर तो गाँव-गाँव के लोग अपना-अपना कारोबार चला लेंगे। खर्च भी न करना होगा, जनता की सेवा के लिए बहुत ज्यादा पैसा सीधा मिलेगा। नहीं तो आज तीन सौ करोड़ रुपया सेना के लिए, दो सौ करोड़ रुपया योजना के लिए और सौ करोड़ अनाज के लिए हर साल खर्च हो रहा है। इस कृषि-प्रधान देश के लिए सौ करोड़ रुपयों का अनाज बाहर से मँगवाना पड़े, यह बहुत बड़ी दुर्दशा है। फिर भी लोगों को उत्पादन में रस नहीं, क्योंकि भूमिहीनों का जमीन के साथ सम्बन्ध ही नहीं है। आज उन्हें मजदूर के तौर पर रखा गया है, पर कल नहीं भी रखा जायगा। उन्हें रोज आठ आना दिया जाता है, अनाज तो बिलकुल ही नहीं दिया जाता। इसलिए एक साल के लिए अनाज का जो भाव हो, वह उन बेचारों को देना पड़ता है। सालभर में उनको तीन सौ रुपया मिलता है, जो सारे परिवार के लिए काफी नहीं होता। इसलिए उन्हें अनाज देना चाहिए और अनाज पर कुछ पैसा देना हो तो दे सकते हैं।

ग्रामदेवी आत्मदैवत

ग्रामदान के बाद ग्राम-सभा के सदस्य सब मिलकर निश्चित करें कि हमारी जमीन, धन, अक्ल, प्रेम, उद्योगशक्ति, श्रमशक्ति यह सारा गाँव को अर्पण होना चाहिए। कोई देनेवाला और कोई लेनेवाला न रहे, सारे देनेवाले और सारे लेनेवाले हों। दान धर्म है और धर्म सबको लागू होता है। जैसे सत्य, प्रेम और करुणा सबके लिए है, वैसे ही दानधर्म भी सबके लिए है। इसलिए जिसके पास जो कुछ भी हो, वह गाँव को अर्पण कर दे। जिस तरह हम भगवान का प्रसाद लेते हैं, पहले भोग चढ़ाते और फिर हमही बाँटकर खाते हैं, वैसे ग्रामदेवी यह आत्मदैवत है। ग्रामदेवी की कृपा-प्रसाद से जो कुछ मिले, उसे पाकर तृप्त हो जायँ तो सब मजबूत बनेंगे। सारांश, मैं कहता हूँ कि इस सारे के सारे क्षेत्र का ग्रामदान होना चाहिए। तालुका हो तो तालुका-दान होना चाहिए। फिर सारे मिलकर एक साथ दान करें।

साहूकारों पर इतना अविश्वास क्यों?

बहुत-से लोग पूछते हैं कि फिर कर्ज का क्या होगा? जहाँ पचासों लोग ग्रामदान में आ जाते हैं, वहाँ क्या साहूकार उसमें न आयेगा? वह भी कहेगा कि हमारे पास जो कुछ है, वह हम ग्राम को समर्पण करते हैं। अब हमें जीने की सुविधा कर दीजिये। जिसने इतने लोगों को मुसीबत के समय पैदा दिया, क्या वह ग्रामदान की बात न समझेगा? सब मिलकर उसे आश्वासन दें। लोगों की ओर से उसे यह न कहा जाय कि हम कर्ज न चुकायेंगे। हम कर्ज चुकाने की भी दियानत रखते हैं, परन्तु कर्ज लेनेवाला क्या गाँव से अलिप्त रहेगा? सारे क्षेत्र में भावना फैलायी जाय तो उसके ऊपर इस तरह अविश्वास रखें तो कैसे चलेगा?

साहूकारों को आश्वासन दिया जाय

बड़े-बड़े मालिक और व्यापारी अक्लवाले होते हैं, उनमें प्रेम भी भरा रहता है। अगर ये लोग भी सामने प्रेम देखेंगे तो उसमें मिले बिना नहीं रहेंगे। राजा-महाराजा मिट गये। अगर वे सोचते तो निःसन्देह कुछ-न-कुछ तकलीफ अवश्य दे सकते थे। किन्तु सरदार वल्लभभाई की कुशलता के कारण यह कुछ नहीं हो सका। इसमें वल्लभभाई ने कुछ तकलीफ नहीं होने दी और राजा-महाराजाओं को कुछ-न-कुछ साल भर में देने का तय कर लिया गया। हिन्दुस्तान में अगर इसी तरह चले तो सबका लाभ होगा। हिन्दुस्तान का यही सांस्कृतिक धन है। इसमें केवल वल्लभभाई की योग्यता है, ऐसा मानना गलत है। इसमें राजा-महाराजाओं की योग्यता भी अधिक है। उन्होंने कबूल कर लिया और यह कहकर कि "हमें थोड़े दिन के लिए कुछ दीजिये तो वह काफी है। हमें राज की जरूरत नहीं।" राज्य छोड़ा। यह हमने अपनी आँखों देखा। इस तरह हम किसीका कर्ज डुबाना नहीं चाहते। जितना है, उतना देनेवाले हैं। इस तरह साहूकार को ग्रामसभा की ओर से आश्वासन भी मिलेगा। किन्तु अगर बहुत देना हो तो उसके साथ बातचीत कर ग्राम-सभा की ओर से जितना देना हो, उतना दे सकते हैं। ● ●

www.vinoba.in

प्रार्थना-प्रवचन डेकाई (भरुच) ११-१०-'५८

घूमते रहोगे तो कृतयुग में रहोगे

अब हमारे देश को स्वराज्य मिल चुका है। स्वराज्य मिलने के बाद गाँव की बहनों और भाइयों की शक्ति बढ़नी चाहिए। स्वराज्य का अर्थ है, सारे गाँव अपने पैरों पर खड़े हों, सुखी और स्वावलंबी हों। गाँव-गाँव में स्वराज्य आये और गाँव के लोग अपने गाँव का कारोबार सारे गाँव को एक परिवार समझकर स्वयं करें। इस तरह वे स्वयं सारे गाँव के स्वराज्य की योजना करें तो दिल्लीवालों का काम कम हो जायगा। फिर सरकार को आज जैसे पचपन लाख नौकर न रखने पड़ेंगे। अपना-अपना कारोबार वे देख लेंगे तो सरकार नाममात्र की ही रह जायगी। माला में सब फूलों को जोड़नेवाला एक धागा होता है, फिर भी माला तो फूल की ही कही जाती है, धागे को नहीं। गाँव फूल जैसे सुगंधित, सुंदर रूपवाले हों और सरकार उन सबको पिरोने के लिए सिर्फ अन्दर सूत का धागा बने। मुख्य, प्रधान लोग गाँव-गाँव के ही हों। तभी गाँववालों को स्वराज्य मिलने का अनुभव होगा। आज तो वे सिर्फ सुनते हैं कि स्वराज्य मिला है, इससे ज्यादा उन्हें कुछ नहीं मिला।

सबका समाधान ही सर्वोदय

ग्रामदान का मुख्य अर्थ यही है कि ग्रामदानी गाँव का कारोबार गाँव के सब लोग मिल-जुलकर, एक-दूसरे से विचार-विनिमय कर करें। ऐसा नहीं कि सिर्फ दस लोगों का समाधान देखा जाय। जिससे सबका समाधान हो, वही सर्वोदय है। दस का समाधान हो और आठ का न हो, तब तो गाँव-गाँव में द्वेष और झगड़े बढ़ते हैं। किन्तु जिस गाँव में समझदार भाई रहते हैं और सबका समाधान होता है, वहाँ गाँव की गाड़ी आगे बढ़ती है। यही ग्रामदान है। छोटे-छोटे जमीनवाले, भूमिहीन और बड़ी जमीनवाले, तीनों मिलकर सारे गाँव को अपना एक परिवार समझें।

अधिक जमीनवालों का अधिक लाभ

ज्यादा जमीनवालों से मैं यही कहा करता हूँ कि आपको तो सबसे ज्यादा लाभ मिलता है। क्योंकि आपकी जमीन का थोड़ा-सा हिस्सा सब भूमिहीनों को मिलता है और उन सबका प्रेम आपको मिलता है। आपकी सेवा के लिए प्राण समर्पण करनेवाले सेवक आपको मिलते हैं। वैसे आपकी जमीन तो बहुत थोड़ी-सी जाती है। गाँव के लोग बड़े कृतज्ञ होते हैं। उनपर कोई थोड़ा-सा भी उपकार कर दे तो वे जन्मभर उसका स्मरण रखते हैं।

पशु भी प्रेम पहचानता है तो मानव क्यों नहीं ?

कुछ बड़े लोगों को यह भय लगता है कि अगर हम इन भूमिहीनों को जमीन दे दें तो लोग हमारे यहाँ काश्त करने आयेंगे या नहीं ? मैं पूछता हूँ, क्यों नहीं आयेंगे ? आप अविश्वास क्यों रखते है ? आप उन्हें खानेभर की जमीन देंगे तो क्या वे नहीं आयेंगे ? उलटे वे पहले से भी अधिक प्रेम से काश्त करने आयेंगे। जिस गाँव के लोगों ने उन्हें जमीन दी है, उस गाँव में काम करने से वे जी नहीं चुरायेंगे। पूरा काम करना चाहिए, ऐसा उनको लगेगा। आज तो इससे एकदम उलटी ही बात चलती है। मालिक के खेत में जो मजदूर काम करता है, उसके पीछे देखभाल रखनेवाला कोई न हो तो वह काम ही नहीं करता। अगर उन्हें जमीन मिले तो वे मालिक का काम प्रेम से करेंगे। उनमें कृतज्ञता होगी कि इन लोगों ने हमें प्रेम से जमीन दी है तो हमें भी प्रेम से उनका काम करना चाहिए। इस तरह प्रेम के बदले प्रेम और विश्वास के बदले विश्वास मिलेगा, जबकि आज अविश्वास के बदले अविश्वास मिलता है। दुनिया का यही अनुभव है। सन्तों ने भी दुनिया के विरुद्ध अनुभव की बात नहीं कही है। अगर हम जानवर पर प्रेम करें तो वह भी हमपर प्रेम करता है। जानवर प्रेम पहचानता है तो मनुष्य न पहचाने, यह असंभव है। अतः सारे गाँव का एक परिवार बने तो उसमें बड़े लोगों की इज्जत, मान और प्रतिष्ठा बढ़ेगी ही, घटेगी नहीं। इसमें आप किसी भी तरह खोयेंगे नहीं। इसीका नाम है ग्रामदान।

ठाकुर सबकी सेवा करें

यहाँ सौराष्ट्र और राजस्थान में पहले छोटे-छोटे ठाकुर रहते थे। सिंह "वन का राजा" कहलाता है, क्योंकि जंगल के हिरनों और खरगोशों को वह खा जाता है। किन्तु जो ठाकुर हैं, वे इस तरह के राजा नहीं। वे खुद को सूर्य और चन्द्रवंशी बतलाते हैं। सूर्यवंशी याने रामचन्द्र के वंशज और चन्द्रवंशी याने श्रीकृष्ण के वंशज। राम-कृष्ण कैसे थे ? रामचन्द्रजी ने जटायु का श्राद्ध किया था, शबरी के जूठे बैर खाये थे, इसलिए आज हिन्दुस्तान में लाखों राजा हो जाने पर भी लोगों को एक ही राजा राम याद आता है। लोग राजाराम कहते हैं। सबको तकलीफ देनेवाले राजा का नाम लोग क्यों लें ? कृष्ण भी कैसे थे ? वे गाय की और घोड़े की सेवा करते थे। उन्होंने सुख तो जिन्दगी में कभी नहीं भोगा। इसलिए यदि ये ठाकुर सच्चे सेवक बनें तो लोग उनका भी नाम लेंगे। वे सबकी सेवा प्रेम से कर सकते हैं।

घर में माँ और बाप को प्रधान पद मिलता है, क्योंकि वे लड़के की सेवा में काफी दुःख भोगते हैं। वे बच्चों के दुःख में स्वयं दुःखी होते हैं। इस तरह जो सेवा करता है, उसीको प्रधानपद मिलता है। अगर बड़े-बड़े ठाकुर इस तरह सेवा में लग जायँ, ग्रामदान में अपनी जमीन दें और अपने गाँव में ग्रामसभा बना लें, उस गाँव में दूसरा कोई मालिक न हो, सबको काम मिले, कोई भूखा न रहे, सब मेहनत कर खायें और सब मिलकर गाँव का कारोबार चलायें तो गाँव का काम भी आसान होगा और सरकार का भी काम आसान होगा।

गाँव को सुखी कैसे बनायें ?

गाँव में हमेशा सफाई रहे, गंदगी न हो, इसका ध्यान रखना चाहिए। गाँव में लोगों के मलमूत्र का ठीक उपयोग कर उसकी खाद बनायी जाय। उससे बीमारी न बढ़ेगी और खेत को खाद भी मिलेगी। गाय का दूध बढ़ाने की भी योजना करनी होगी। गाँव में अच्छे बैल पैदा हों, इसकी भी योजना करनी होगी। जमीन की फसल कैसे बढ़े, तम्बाकू, मूंगफली और गन्ना बढ़ाकर जमीन बिगाड़ी न जाय। गाँव के लिए जितना कपड़ा चाहिए, उतना ही कपास बोया जाय। गाँव में एक छोटी दूकान हो और गाँव के प्रत्येक घर का उसमें शेयर रहे। उसी एक दूकान से सभी लोग माल खरीदें। जो कोई अपना माल बेचना चाहे, उसी दूकान की मार्फत बेचे। गाँव में तरह-तरह के धंधे खड़े किये

www.vinoba.in

जायँ। गाँव का तेल, गाँव की शक्कर गाँव में ही तैयार हो। गाँववालों का स्वास्थ्य अच्छा रहे। इसके लिए गाँव में बीड़ी, शराब आदि व्यसन न रहें। गाँव में सबको अच्छे-अच्छे भजन और गीत सिखाये जायँ। गाँव के बच्चों को पढ़ना-लिखना सिखाया जाय। बड़े लोगों को रामचरित्र, भागवत आदि पढ़कर सुनाया जाय। गाँव में उत्सव किस तरह हो, यह भी गाँव के लोग मिलकर तय करें। इस तरह अगर गाँव में किया जायगा तो गाँव सुखी होगा। इसीका नाम ग्रामदान है।

प्रचारक सेवक गाँव-गाँव घूमें

ये सारी बातें मेरे मुँह से कितने लोग सुन सकते हैं? एक सभा में ज्यादा-से-ज्यादा गाँव के लोग आते हैं, ऐसा मान लिया जाय तो भी सालभर में ६००० गाँव के लोग ही सुन सकते हैं। फिर हमारे देश में पाँच लाख गाँव हैं। वे सारे मेरे मुँह से सुनने की आशा रखें तो सौ साल लग जायँगे। किन्तु यह काम तो बहुत जल्दी होना चाहिए। इस तरह समझानेवाले लोगों के बीच निरंतर घूमते रहें, यही मैं चाहता हूँ। मैं गाँववालों और शहरवालों से यही माँग करता हूँ।

शान्तिसैनिक के अद्वितीय आदर्श

आजकल तो मैं सेवा सैनिक और शान्तिसैनिक की भी माँग कर रहा हूँ। रविशंकर महाराज गुजरात के लिए शान्तिसैनिक का अद्वितीय नमूना हैं। जवानी के बीस साल तक वे गाँव-गाँव घूमे और आज वृद्धावस्था में भी घूम रहे हैं। गाँव-गाँव पहुँचकर संदेश सुनाते हैं। वे कहते थे कि "जवानी में जब मैं गाँव-गाँव घूमता था तो लोगों को यह नहीं कहता था कि बीड़ी और शराब छोड़ो। किन्तु लोगों के घर जाकर उनकी सुख-दुःख की बातें सुनता था। उनके घर जाने पर खुद उन्हें ही लगता था कि महाराज घर आये हैं तो शराब और बीड़ी पीना उचित नहीं।" रविशंकर महाराज का जीवन-चरित्र गाँव-गाँव में पढ़ा जाना चाहिए। हिन्दुस्तान की हर भाषा में इसका अनुवाद होना चाहिए। ऐसी पुस्तकें रामायण से कम मदद नहीं देतीं, क्योंकि यह तो आज के जमाने की बात है और रामायण पुराने जमाने की। इसका मराठी में अनुवाद हो चुका है, शायद हिन्दी में भी हुआ है, किन्तु शेष सभी भाषाओं में इसका अनुवाद होना चाहिए।

चरैवेति, चरैवेति

हमें रविशंकर महाराज जैसे अनेक सेवक चाहिए। जिस तरह सूर्य-चन्द्र एक-एक ही होते हैं, उस तरह ऐसे सेवक भी एक ही होते हैं, यह मानना गलत है। फिर भी आकाश में सूर्य-चन्द्र के सिवा तरह-तरह की छोटी तारिकाएँ भी अपनी-अपनी जगह बहुत बड़ी होती हैं। जिनके पास जो प्रकाश है, उतना ही मिलता है। प्रकाश के आसपास अंधेरा नहीं चलता। रविशंकर महाराज की शक्ति बड़ी है तो वे बड़े-बड़े काम करें और दूसरों की शक्ति कम है तो वे कम काम करें। किन्तु काम तो जब वे घूमेंगे, तभी होगा। यह बात मेरी बनायी नहीं, यह तो वेद की बात है। वेद में कहा है "चरैवेति चरैवेति" चलते रहो, चलते रहो। सभी हमेशा चलते ही रहें। जो चलेगा, उसका भाग्य भी चलेगा। जो बैठा रहेगा, उसका भाग्य भी बैठा ही रहेगा। वेद भगवान ने कहा है कि मनुष्य सोता है तो उसका भाग्य भी सोता है।

घूमने की लज्जत ही निराली

भरुच जिले में दस-बारह दिन घूमा तो दस-बारह जवान मेरे साथ थे। उन्हें भी इस काम में रुचि हुई। इस तरह अगर बारह दिन के लिए रुचि पैदा होती है तो बारह महीने के लिए क्यों न पैदा हो? घूमने की लज्जत तो कुछ और ही है। महाराज कहते थे कि मैं जब जवानी में घूमता था तो घूमता ही रहता था, रोज ४०-५० मील घूमता था। लेकिन आज के जवान तो रोज दस-बारह मील भी नहीं घूम सकते। गाँव-गाँव में जाकर बहुत काम करना है—बोलना, चलना, सुनना, बेचना, पढ़ना, लिखना, चिन्तन और भगवान की प्रार्थना, भजन करना है। ये सारे काम हमें स्वयं करने हैं और दूसरों से भी करवाने हैं। चरखा कातना और कतवाना भी है। कुदाली लेकर किसीके खेत में जाकर काम करना है। झाड़ू लेकर गाँव की सफाई करनी है।

कोई बीमार हो तो उसकी खोज-खबर लेना, इससे उसे सान्त्वना मिलेगी। इस तरह गाँव की कितनी ही सेवा कर सकते हैं। अन्ततः मदद देनेवाला, संकट से मुक्त करनेवाला ईश्वर के सिवा दूसरा कोई भी नहीं है। मनुष्य को संकट में दूसरा मनुष्य सहानुभूति जताये, हमदर्दी दिखलाये तो इतना ही उसको अच्छा लगता है। कोई मनुष्य मर जाय तो हम उसे जिन्दा थोड़े ही कर सकते हैं। फिर भी उसके पीछे रोनेवालों के साथ समवेदना प्रकट करने, सान्त्वना देने से उनका दुःख अवश्य कुछ कम होता है। जो जवान रोज-रोज घूमेंगे, उन्हें यह भी करना होगा। वे गाँव-गाँव और घर-घर जाकर इस तरह काम करेंगे तो उन्हें बहुत लाभ होगा

घूमने का परिणाम

ऐसा भाग्य दूसरा कोई नहीं हो सकता। एक गाँव में एक ही दिन रहना है, दूसरे दिन दूसरे गाँव में जाना है तो कोई भी मनुष्य एक दिन में अपना दोष प्रकट नहीं होने देता। मेरे परिचय में लोग आते हैं और लोगों को मेरा परिचय भी एक ही होता है। उसमें भी मैं गुस्सा करूँ तो लोगों के मन पर यही असर होगा कि यह मनुष्य क्रोधी है। इससे सावधान रहना चाहिए। किसी गाँव में दस-पाँच दिन रहना हो तो दोष बाहर प्रकट न होने देना जरा कठिन है, किन्तु जब एक गाँव में एक ही दिन रहना हो तो अपना दोष प्रकट न होने देना सम्भव है। इस तरह रोज नये गाँव में जाने और दोष प्रकट न होने देने से तो दोष प्रकट करने की आदत नष्ट हो जायगी। इस तरह दस वर्ष तक गुस्से को बाहर प्रकट होने का मौका ही न मिले तो वह ऊबकर सदा के लिए चला जायगा और हम दोषों पर अनायास काबू पा जायँगे। कहीं एक ही जगह रहना हो तो गुण ही प्रकट होने चाहिए। मान लें कि गुण अपने पास न हो तो उसे उधार लेकर उस दिन प्रकट किया जाय। इस तरह नित्य घूमने से दोषों का निराकरण और गुणों का प्रकाशन होता है।

युवकों के लिए अपूर्व साधना

कोई योगिराज गुफा में शान्त बैठे रहते हैं तो उन्हें गुस्सा करने का अवसर नहीं मिलता, क्योंकि वहाँ मनुष्य के साथ संबंध ही नहीं रहता है। एकान्त में साधना करने से उनका दिमाग हलका हो जाता है, थोड़ी भी आवाज सहन नहीं होती। किन्तु लड़के बेचारे योगी नहीं होते। अगर वे चिल्लायें तो योगिराज का दिमाग गरम हो ही जायगा। किन्तु जो चीज पहले के साधु नहीं कर सकते थे, वह याने क्रोध पर काबू पाना आज के लड़के कर सकते हैं। इसीलिए वेद ने आज्ञा दी है कि जब तुम घूमते रहो, तब कृतयुग में रहोगे। आकाश में सूर्यनारायण रहता है तो ईश्वर का स्पर्श होता है। हृदय बड़ा और विशाल होता है। गुण प्रकट करने की प्रेरणा भी होती है। दोषों को सम्हालने की जरूरत पड़ती है। इस तरह अभ्यास हो जाय तो धीरे-धीरे ये दोष नष्ट हो जायँगे। यह एक साधना युवकों के लिए है!

www.vinoba.in

प्रार्थना-प्रवचन चावंड (अंब्रेली) १४-११-'५८

बिना विश्राम के शान्ति-शक्ति का अर्जन करें

गत सात-आठ सालों से हमारी पदयात्रा चल रही है। जहाँ तक जमीन का मसला हल नहीं होता, यह जारी ही रहेगी। इस यात्रा के दरमियान बहुत-से अनुभव आये और छह लाख लोगों ने दान दिया। चालीस लाख एकड़ से ज्यादा भूमि हासिल हुई और चार हजार से ज्यादा ग्रामदान। यह सारा काम लोगों ने अत्यन्त प्रेम से किया। इस दृष्टि से इस काम की कीमत बहुत ज्यादा है। हालाँकि जो करना था, उस परिमाण में यह काम सिर्फ एक अंश हुआ है।

ग्रामदान अभयदान

गुजरात में आने के बाद फुटकर दान बहुत मिला है। गुजरात और काठियावाड़ की हालत ऐसी है कि यहाँके लोग विचार सहज ग्रहण कर लेते हैं। गाँव में स्वराज्य की योजना होगी और ग्राम-स्वराज्य की बुनियाद के तौर पर ग्रामदान का विचार लोगों को समझाया जायगा तो लोग उसे ग्रहण कर लेंगे। मैंने यहाँ आने पर कहा था कि "ग्रामदान अभयदान है।" आज भी उसीको दुहराता हूँ। आज यहाँके लोगों ने हमें खिलाया। लगभग ढाई हजार लोगों ने यहाँ भोजन किया और गाँववालों ने बहुत अच्छी व्यवस्था की। गाँववालों ने यह भी कहा कि हमारे गाँव में कभी दो मत नहीं हुए हैं। हम जो विचार या काम करते हैं, वह एकमत से करते हैं।

करुणा से ही नित्य धर्म-बुद्धि

एक प्रश्न हमें समझना है कि अभी तक हमारी धर्म-बुद्धि नित्य के तरीके से काम नहीं करती, नैमित्तिक तरीके से काम करती है। किन्तु अब हमें समझना होगा कि इस तरह मौके-मौके पर धर्मबुद्धि प्रकट होती है तो धर्म ऐसी कोई नैमित्तिक वस्तु नहीं, वह तो नित्य की वस्तु है। जैसे हम नित्य खाना खाते हैं, सुबह स्नान करते हैं, वैसे ही धर्मबुद्धि भी नित्य होनी चाहिए। यह करुणा के बिना नहीं होगी और उसके बिना जीवन में कोई रस पैदा नहीं होगा। इसलिए व्यापक करुणा-बुद्धि प्रकट होनी चाहिए। यह विचार करने की वस्तु है और यही मैं समझाता हूँ।

नैतिक पतन का कारण : आज की आर्थिक समाज-रचना

आज यह पूछा गया है कि लोगों की भौतिक उन्नति के लिए आप और सरकार भी कोशिश करती है। फिर भी लोगों का जो नैतिक पतन हो रहा है, उसके लिए क्या किया जाय ? नैतिक उन्नति के लिए क्या कर सकते हैं ? इस बारे में मैंने इसके पहले बहुत बार कहा है। आज जो नैतिक पतन होते हैं, वे किस क्षेत्र में ज्यादा होते हैं, यह देखना होगा। काम, क्रोध और मोह मनुष्य को ग्रासते और बहुत तकलीफ देते हैं, यह हम प्राचीन काल से देखते आये हैं। किन्तु आज कामवासना का उतना वेग नहीं, जितना कि प्राचीन काल में था। काम-वासना से ऋषियों का भी पतन हुआ है, ऐसी कथाएँ महाभारत और पुराने ग्रन्थों में मिलती हैं, किन्तु आज वैसी स्थिति नहीं है। इसी तरह क्रोध का भी जो वेग पहले जमाने में था, वह आज नहीं रहा। लोभ की मात्रा अवश्य बढ़ी है। इसलिए समाज का मुख्य पतन आर्थिक क्षेत्र में ही है। वैसे सभी देशों में भी यह पतन है, पर अपने देश में विशेष है, क्योंकि यहाँ दारिद्र्य और विषमता अधिक है। जमीन का उत्पादन कम है और लोगों को काम नहीं मिलता, बेकारी ज्यादा है, इसलिए पतन होता है और नैतिक दोष आर्थिक कारणों से ही होते हैं। इस तरह स्पष्ट है कि समाज को जो मुख्य दोष ग्रासता है, वह अर्थ-लोभ है। इसका कारण आज की गलत समाज-रचना है। आज मनुष्य का हृदय अन्दर सड़ा नहीं, निर्मल है, फिर भी बाहर से, ऊपर-ऊपर से खराबी आ गयी है। इसीलिए पाप होते हैं। आज की आर्थिक समाज-रचना ठीक नहीं है, उसे बदलने की जरूरत है। यह अगर हम कर सकें तो आज जो नैतिक पाप होते हैं, उन्हें अवश्य कम कर सकते हैं।

पैसे को कारोबारी बनाना ही भूल

आज हमने पैसे को कारोबारी बना दिया है। व्यापारी मुनीम को रखे और सारा कारोबार उसे ही सौंप दे तो व्यापार कैसे अच्छा चलेगा ? पैसा भी ऐसी ही चीज है। उसका कोई स्थिर मूल्य नहीं। आज एक रुपया याने दो सेर चावल है, पर कल दो का एक भी हो जायगा। रुपया तो एक दीखता है, फिर भी उसका मूल्य बदल जाता है। इस तरह जो बात-बात में बदलता है, वह अच्छी बात भी बिगाड़ सकता है। आज सहकार और प्रेम तो है, किन्तु हमने शरीर-परिश्रम से ज्यादा महत्त्व पैसे को दे दिया है। इस तरह समाज-रचना स्पर्धा पर खड़ी की है। परस्पर स्पर्धा होने के कारण परिश्रम और मेहनत के बदले में गलत मूल्य आ सकते हैं और हम उन्हें मान लेते हैं। इसलिए आज यह पतन हो रहा है।

दान-प्रक्रिया का ही अवलम्बन कर्तव्य

हम गाँव-गाँव अपना स्वराज्य बनायें तो पैसे से मुक्ति मिल जायगी। भूदान और ग्रामदान बाह्य दृष्टि से संपत्ति नहीं बढ़ाता, उल्टे घटा ही रहा है। वह भौतिक और नैतिक दोनों में भेद करना नहीं चाहता। दोनों में भेद करना गलत है। दोनों चीजें एक ही हैं, साथ-साथ होती हैं। गाँव की उन्नति होगी तो नैतिक उन्नति भी होगी। उसके लिए दान-प्रक्रिया का अवलम्बन करना होगा। प्रेम और करुणा से दान देने से तो भौतिक उन्नति के साथ-साथ नैतिक उन्नति भी होगी। मनुष्य की करुणाबुद्धि जगने पर नैतिक उन्नति भी अवश्य होगी। मेरा विश्वास है कि जनता इस बात को ग्रहण करेगी। गुजरात, जहाँ गांधीजी का जन्म हुआ है, जहाँ उन्होंने अपने प्रयोग किये हैं, गुजराती भाषा में लिखा है, बोले हैं, वहाँ आज भी उनकी मानसिक वासना है, यह आपको खयाल करना होगा। इस दृष्टि से आप देखेंगे तो आपको काम में उत्साह आयेगा और आप यहाँ काम कर सकेंगे।

हम अभागे साबित न हों

आपको याद होगा कि आज पंडित जवाहरलाल नेहरू का जन्म-दिन है। अपने देश में महापुरुषों की परम्परा चली आयी है। यहाँ इस देश में जो पहाड़, नदियाँ, जंगल, अनाज हैं, ये सारी सम्पत्ति और वैभव की संपदा है। किन्तु यह असली सम्पत्ति नहीं। हम अपने देश की महिमा इन्हींके लिए नहीं गाते। हमारे देश में परमेश्वर की कृपा से महापुरुषों की परंपरा

www.vinoba.in

चली आयी है और वही हमारी मुख्य सम्पत्ति है। पंडितजी आज विश्व-शान्ति के लिए काम कर रहे हैं। अगर गाँव-गाँव में पुलिस और सेना की हमें जरूरत महसूस होगी तो उनका यह काम कमजोर हो जायगा, फीका पड़ जायगा। हम अपनी आन्तरिक शान्ति के लिए पुलिस और सेना का उपयोग न करें, उसकी हमें जरूरत भी नहीं है। अगर हम अपने देश में ऐसी शान्तिशक्ति प्रकट न कर सके तो पण्डितजी सारे विश्व में जो करना चाहते हैं, उसे न कर सकेंगे। नेताओं की शक्ति उनकी वाणी में ही नहीं होती। उन्हें हम अनुयायियों के कार्य का बल मिलना चाहिए। पंडितजी में यह गुण है कि वे जो सोचते हैं, वह सारी दुनिया की दृष्टि से सोचते हैं। वैज्ञानिक जमाने में व्यक्तिगत गुण की उतनी कीमत नहीं। इसलिए सत्पुरुषों, बड़े-बड़े मनुष्यों के पीछे ऐसा कोई बल न हो तो उनका भी काम नहीं बनेगा। ऐसा मनुष्य आज हममें है। यह हमारा दुर्भाग्य भी हो सकता है, यदि हम उसे बल न दे सके। उनका तो यह सौभाग्य ही है कि निकम्मे लोगों में जन्म लेकर भी उनमें उनकी सेवा की वृत्ति आयी है। अतः इस देश में अगर हम शांति की शक्ति नहीं निर्माण करते हैं तो हम अभागे ही साबित होंगे।

देश का मुख्य काम शांतिशक्ति का निर्माण

आज हमारी संपत्ति का अधिक क्षय सेना के लिए हो रहा है। इस समय पाकिस्तान और हिन्दुस्तान दोनों देशों पर चार सौ करोड़ रुपया खर्च हो रहा है। सेना पर तो इतना खर्च हो रहा है और अलावा इसके राज्य-व्यवस्था के लिए भी दो सौ करोड़ रुपये का खर्च होता है। इतने खर्च की कोई जरूरत नहीं। इतनी सेना रखने पर भी देश निर्भय नहीं हुआ है, लोग तो भयभीत ही हैं। हम भयभीत होते हैं तो दुनिया के सवालों का हल नहीं हो सकता और दुनिया दिन-ब-दिन अशांति की ओर जायगी। इसलिए मुख्य काम देश में शांति-शक्ति पैदा करने का है।

शान्ति और शक्ति अलग-अलग नहीं

शांति और शक्ति दोनों अलग-अलग हैं, ऐसा मानना गलत है। अशांति में शक्ति नहीं है, उससे तो शक्ति का क्षय ही होता है। संहारक शस्त्र बढ़ेंगे तो मानव जाति नहीं रहेगी। आज के जमाने में हमारे लिए कोई तारक शक्ति है तो वह शांति की शक्ति ही है। इसीलिए कुछ लोगों ने जब कहा कि यहाँ सर्वोदय-पात्र थोड़े-बहुत हुए हैं तो मैंने कहा कि हर घर का मत शांति और अहिंसा के पक्ष में है, ऐसा हो। इसके लिए हर घर में सर्वोदय-पात्र होना चाहिए। यह सक्रिय मतदान होगा। इस तरह भारत में हम करेंगे तो भारत की नैतिक शक्ति पैदा होगी।

दुनिया को भारत से आशा

आज दुनिया की ऐसी स्थिति हो गयी है कि बहुत शस्त्र बढ़ा-बढ़ाकर उसे आगे का कोई मार्ग ही नहीं दीख रहा है। इसलिए हमें ऐसा मार्ग ढूँढ़ना होगा, जिससे दुनिया बचे। हमारी यात्रा को केवल देखने के लिए बाहर के देश के लोग आते हैं। आखिर उन्हें यहाँ क्या देखने को मिलता है? यही कि एक नव-शक्ति निर्माण हो रही है। इस देश से हमारे देश का काम होगा, ऐसी वे आशा रखते हैं। इतना ही नहीं, बल्कि सारी दुनिया को हम एक शक्ति दान कर रहे हैं, जो आशा लेकर आते हैं, उनकी इच्छा-शक्ति हमारे साथ है। भारत के बारे में एक आशा और श्रद्धा लेकर वे आते हैं। भारत में एक ऐसी शक्ति का आविर्भाव हो तो देश के स्वागत के लिए और उस शक्ति के स्वागत के लिए सारी दुनिया का मानस तैयार है। ऐसी स्थिति में आपको और हमें एक क्षण भी विश्राम नहीं करना चाहिए।

"राम-काज साधे बिना, मोहि कहाँ विश्राम" तुलसी रामायण में हनुमान कहते हैं कि राम-कार्य जबतक नहीं होगा, तबतक मेरे लिए आराम नहीं। राम का कार्य जब होगा, तब राम ही हमें आराम देगा। इससे दूसरा कौन-सा बड़ा काम हो सकता है? इसलिए यह काम नहीं होगा, तबतक बाहरी आराम हमारे लिए नहीं होना चाहिए, हम निरंतर कार्यरत हों। इसके लिए हम सबको तैयार होना चाहिए। ● ● ●

प्रार्थना-प्रवचन

गजलावाट (बड़ोदा) १३-१०-'५८

ग्रामदान की कसौटी

आज मेरा स्वास्थ्य थोड़ा ठीक न होने से एक सभा रद्द कर दो सभाओं का काम एक ही सभा से चलाया। मेरी तबीयत अच्छी होती तो भी मैं यही पसन्द करता, क्योंकि मेरी कोई "बड़ों की सभा" और "छोटों की सभा" अलग नहीं होती। एक ही सभा में स्त्री-पुरुष, पढ़े-लिखे या अशिक्षित सभी मिलकर आ सकते हैं, प्रार्थना, भजन कर सकते हैं। ग्रामदान की बात सबको सहज ही समझ में आ सकती है। छोटे-छोटे लड़के अपनी बुद्धि के अनुसार उसे समझ सकते हैं और बड़े अपनी-अपनी बुद्धि से समझ सकते हैं। इसलिए एक ही सभा, शुद्ध अद्वैत ही अच्छा लगता है।

गांधीजी की शिक्षा

आज यहाँ कई गाँवों के भाई-बहन और ग्रामदानी गाँवों में काम करनेवाले कार्यकर्ता आये हैं। एक-एक ग्रामदान को अपनी परीक्षा ही माननी चाहिए। हिन्दुस्तान में जब तक स्वराज्य नहीं था, तब तक हम यहाँके दुःख, दोष और गलतियों की जिम्मेदारी अंग्रेजी राज्य पर डालकर स्वयं उससे मुक्त हो जाते थे। इन सबका कारण अंग्रेजी राज्य को बतलाकर हम उस ओर अधिक ध्यान नहीं देते थे। किन्तु जब गांधीजी आये तो उन्होंने हमें चेतावनी दी कि आपको यह विचार-पद्धति दोषपूर्ण है। यह सही है कि ये दोष, दुःख अंग्रेजी राज्य के परिणाम हैं। फिर भी वह अंग्रेजी राज्य भी हमारे दोषों का परिणाम है, यह हमें नहीं भूलना चाहिए। इसलिए हममें जो दोष हैं, उनका निवारण कर हमें शुद्ध होना चाहिए। अगर हममें अपनी अवस्था के विषय में जागृति आ जाय तो बाद में स्वराज्य भी मिल सकता है। स्वराज्य प्राप्त करने की शक्ति भी तब आयेगी, जब हम अपने दोषों का निर्मूलन करेंगे। गांधीजी की यह बात हम कुछ लोग समझे और हमने कुछ काम किया, परिणामस्वरूप यह स्वराज्य मिला।

स्वराज्य के बाद दूसरा काम ग्रामस्वराज्य

अब स्वराज्य के बाद देखना चाहिए कि क्या हो रहा है। कुछ लोग कहते हैं कि स्वराज्य तो मिला, परन्तु हम तो जैसे के तैसे ही हैं। हमारी स्थिति में कोई फर्क नहीं हुआ। इसका अर्थ यह नहीं कि उन्हें यह कहना है कि स्वराज्य नाहक आया और अंग्रेजों को फिर से बुलाया जाय तो हालत जरा अच्छी होगी। उनका यह कहना भी नहीं है कि उससे हमारी अंग्रेजी अच्छी होगी। आज अंग्रेजी का स्टैण्डर्ड स्कूलों में बहुत कम हो गया

www.vinoba.in

है। हमारे लड़के फिर से अंग्रेजी सीखेंगे और हमारी योग्यता भी बढ़ेगी। फिर भी वे कहते हैं कि स्वराज्य के बाद भी हम जैसे के तैसे हैं। इसका अर्थ क्या है, यह हमें समझ लेना चाहिए। स्वराज्य के बाद अभी जिस चीज की जरूरत है, वह है ग्रामदान। याने ग्रामस्वराज्य की बुनियाद। अपने देश में स्वराज्य आया है, पर उसका पार्सल दिल्ली, बम्बई जैसे शहरों में आकर रुका है। इसीलिए गाँव को उसका लाभ नहीं होता। गाँव-गाँव में उसका लाभ तभी होगा, जब गाँव-गाँव में स्वराज्य आयेगा। स्वराज्य का आनन्द तो सबको होना चाहिए, तभी देश को स्वराज्य मिला है, इसका सबको भान होगा। इसलिए मैं कहता हूँ कि देश स्वतंत्र होने के बाद, देश को स्वराज्य मिलने के बाद दूसरा काम है, ग्राम को स्वराज्य प्राप्त कराने का और उसकी बुनियाद है ग्रामदान।

ग्रामदान होने के बाद भी लोग कहें कि गाँव की स्थिति तो पहले जैसी थी, वैसी ही आज भी है, याने हम भेद-भाव, आलस, व्यसन कायम रखेंगे, जाति-जाति का झगड़ा चलता रहेगा, शादी में खर्च भी पूर्ववत चालू रहेगा, गाँव में धंधा भी कुछ न रहेगा और गन्दगी वैसी ही रही तो ग्रामदान होने पर भी कुछ लाभ नहीं। मुझे नरसिंह मेहता का गीत याद आ रहा है।

"शुं थयूं स्नान, सेवा ने पूजा थकी......

"ज्यां लगी आत्मतत्त्व चिन्हों नहीं, त्यां लगी साधना सर्व जूठी" याने अगर आत्मज्ञान नहीं हुआ, आत्मदर्शन नहीं हुआ, आत्म की शक्ति का भान नहीं हुआ तो बाकी सभी साधनाएँ व्यर्थ हैं। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि आत्मज्ञान नहीं हुआ तो हम स्नान क्यों करें ? आत्मज्ञान नहीं हुआ तो हमारी आज तक की सब साधना व्यर्थ गयी। ऐसा ही होगा, अगर ग्रामदान के बाद हम उसका अच्छी तरह से उपयोग नहीं करेंगे। लोग उसी तरह बोलेंगे। सर्वोदयवाला उनसे यह कभी नहीं कह सकता कि अगर आप ग्रामदान करते हैं तो बाहर से हम आपको मदद दिला देंगे। चुनाव के लिए आनेवाले ऐसी बातें कह सकते हैं। वे कह सकते हैं कि आप अगर दूसरों को मत देंगे तो आपको नरक में ले जायँगे और हमें चुन देंगे तो हम आपको स्वर्ग में पहुँचा देंगे। सर्वोदयवाला तो यही कहेगा कि आपका स्वर्ग और आपका नरक आपके ही हाथ में है।

एक बहन एक गाँव में मुझे मिली। वह मुझसे कहने लगी कि "देखिये बाबा, हमारे गाँव में चुनाव के समय तीन-तीन पेटियाँ आयीं और हमने सोचा कि तीनों पेटी में मत डालेंगे तो हमारा भला होगा। कुछ बहनों ने पहली पेटी में, कुछ ने दूसरी पेटी में और कुछ ने तीसरी पेटी में। इस तरह तीनों पेटियों में मत डाला तो भी अब तक कुछ नहीं हुआ।" वह यह शिकायत करना चाहती थी कि तीन देवता में से एक तो संतुष्ट होना चाहिए था, पर एक भी नहीं हुआ। इस तरह ग्रामदान के बारे में लोग कल्पना न कर लें, इसलिए हमें सावधान रहना चाहिए। अगर हममें "हम सब एक परिवार के हैं" यह भावना जागरित हो जाय तो तुरन्त ही गाँववालों को महसूस होगा कि जो शक्ति हममें पहले नहीं थी, वह आ गयी है। जैसे मुँह में गुड़ डालते ही मिठास का अनुभव होता है, वैसे ही गाँववालों को भी अपनी शक्ति तुरन्त महसूस होनी चाहिए। "हम सब एक परिवार के हैं, सब एक साथ जीयेंगे और एक साथ मरेंगे।" इस तरह जिनकी भावना होगी, उनके साथ परमेश्वर रहेगा। जहाँ सब प्रेम से एक साथ रहते हैं, वहाँ परमेश्वर भी उनके साथ रहता है, ऐसा तत्त्वज्ञानी कहते हैं।

वैसे परमेश्वर सर्वत्र रहता ही है, पर दीखता नहीं। घर में बिजली होने पर भी अगर हम बटन न दबायेंगे तो अंधेरा ही रहेगा। जहाँ गंदगी रहती है, वहाँ परमेश्वर नहीं रहता है। जहाँ स्वच्छता रहती है, वहीं वह प्रकट होता है। जहाँ द्वेष, मत्सर होता है, वहाँ परमेश्वर प्रकट नहीं होता है। जहाँ सत्य हो, प्रेम हो, करुणा हो, भक्ति हो, वहीं परमेश्वर प्रकट होता है।

भूल-सुधार

"विनोबा-प्रवचन" के अंक १३९ पृ० ८०६ पर प्रकाशित चतुर्थ पंक्ति में 'कर पाता' के स्थान पर 'रोक पाती' और पृ० ८०७ पर प्रकाशित पंक्ति ९ के आरंभ में "भी रहे" छपा है, वहाँ 'भी न रहे' पढ़कर कृपालु पाठक भूल-सुधार कर लें। —सं०

ग्रामदानी गाँवों में सत्य, प्रेम, करुणा अत्यावश्यक

ग्रामदानी गाँव के लोगों को सत्य, प्रेम और करुणा की बहुत जरूरत है। कार्यकर्ताओं को भी उसकी बहुत जरूरत है। ये तीन गुण जितने ही प्रकट होंगे, कार्यकर्ताओं की वाणी भी उतनी ही प्रभावशाली होगी। ग्रामदान की कसौटी इसीपर है कि ग्रामदान के बाद वहाँ सत्य प्रकट हुआ या नहीं? प्रेम प्रकट हुआ या नहीं? करुणा प्रकट हुई या नहीं? ये तीनों गुण प्रकट हो जायँ तो कहा जायगा कि उस गाँव की कसौटी हो गयी। तभी वह सच्चा ग्रामदान कहा जायगा। आप मुझसे कहेंगे कि यह गुजरात का पहला ग्रामदान है और यहाँ दस-पाँच अंबरचरखे शुरू हुए हैं आदि। किन्तु इन "आदि-आदि" को मिलाकर भी इस ग्रामदानी गाँव का प्रभाव उतना प्रकट नहीं होगा, जितना कि इन तीन गुणों से प्रकट होगा।

कार्यकर्ता भी इसके बारे में विचार करें और काम भी करें। यह निश्चित विचार है कि ग्रामदान में काम करनेवाले लोग प्रेममय, करुणामय और सत्यमय होने चाहिए तो उनका परिणाम लोगों पर होगा। जिस गाँव में ये तीन गुण प्रकट होंगे, उसका परिणाम सारी दुनिया पर होगा, इसमें किसी प्रकार की शंका नहीं। फिर ऐसे कार्यकर्ता कम हों तो भी चल सकता है। बड़े-बड़े पुरुषों के शिष्य कितने कम थे ? ईसा के १२ शिष्यों में से आखिर में १ ही रहा। शंकराचार्य के विचार को उनके चार ही शिष्यों ने सारे हिन्दुस्तान में फैलाया। मतलब, संख्या कम हो या ज्यादा, उसकी कीमत नहीं। इसमें मुख्य जरूरत है, सत्य, प्रेम, करुणा की। ये गुण अगर गाँव-गाँव में प्रकट होंगे तो इन गाँवों का रूपान्तर ग्रामराज्य में होगा और उसका रूपान्तर आगे चलकर राम-राज्य में होगा।

●●●

अनुक्रम

१. हम गाँव-गाँव और घर-घर में...	थेन	२४ मई '५९	पृष्ठ ८३३
२. वनवासी क्षेत्रों में ग्रामदान...	नारधा	१३ अक्तूबर '५८	„ ८३४
३. घूमते रहोगे तो कृतयुग में...	डेकाई	११ अक्तूबर '५८	„ ८३६
४. बिना विश्राम के शान्ति-शक्ति...	चावंड	१४ नवम्बर '५८	„ ८३८
५. ग्रामदान की कसौटी	गजलावाट	१३ अक्तूबर '५८	" ८३९

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में सम्पादित, मुद्रित और प्रकाशित।
पता : गोलघर, वाराणसी (उ० प्र०) फोन : १३९१ तार : 'सर्व-सेवा', वाराणसी।
www.vinoba.in